

राजस्थान उच्च न्यायालय की जयपुर पीठ के लिए

एसबी सिविल रिट याचिका संख्या 13808/2009

1. श्रीमती तारा आगरावत पत्नी श्री सुभाष चंद्र वैष्णव, उम्र लगभग 44 वर्ष, महर्षि के पास निवासी दाधीच स्कूल, कृष्णापुरी, मदनगंज, किशनगढ़, अजमेर।
2. श्रीमती मंजू बाला चौधरी पत्नी श्री फूल सिंह चौधरी, उम्र लगभग 46 वर्ष, निवासी एडगाहा के सामने, मंझला रोड, शिवाजी नगर, मदनगंज, किशनगढ़, अजमेर।
3. श्रीमती. मंजू जैन पत्नी श्री मकल कुमार गंगवाल, उम्र लगभग 45 वर्ष, निवासी जैन कॉलोनी, मदनगंज, किशनगढ़, अजमेर।
4. श्रीमती. मधु व्यास पत्नी श्री सतीश शर्मा, उम्र लगभग 35 वर्ष, निवासी प्लॉट नंबर 36, राधेश्वर कॉलोनी, सिटी, रोड, मदनगंज, किशनगढ़, अजमेर।
5. श्रीमती. अनीता देवी पत्नी श्री धर्मेन्द्र कुमार, उम्र लगभग 40 वर्ष, निवासी डी-38 अग्रसेन नगर, अजमेर रोड, मदनगंज, किशनगढ़, अजमेर।

----याचिकाकर्ता

बनाम

1. राजस्थान राज्य, सचिव शिक्षा (प्राथमिक), सचिवालय, जयपुर के माध्यम से।
2. जिला शिक्षा अधिकारी (माध्यमिक प्रथम), अजमेर मण्डल, अजमेर।
3. उप निदेशक (माध्यमिक शिक्षा) अजमेर।
4. निदेशक, शिक्षा (प्राथमिक) बीकानेर।

----प्रतिवादी

याचिकाकर्ता(यों) के लिए : श्री एच.आर. कुमावत
प्रतिवादी(ओं) के लिए : सुश्री नमिता परिहार-डिप्टी जी.सी.

न्यायमूर्ति अनूप कुमार ढांड

निर्णय

09/09/2024

प्रकाशनीय

व्याख्या की सुविधा के लिए इस निर्णय को निम्नलिखित भागों में विभाजित किया गया है:-

अनुक्रमणिका

(1) पृष्ठभूमि	2
(2) मामले का तथ्यात्मक मैट्रिक्स	4
(3) पक्षकारों के वकील द्वारा प्रस्तुतियाँ	5
(4) विश्लेषण	6
(5) संदर्भित निर्णय.....	7
(6) अनुपात निर्णय	16
(7) निष्कर्ष.....	27

पृष्ठभूमि:

1. पूरे इतिहास में, महिलाओं ने राष्ट्र निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, फिर भी उन्हें सामाजिक-आर्थिक गतिविधियों में समान भागीदारी के लिए अक्सर बाधाओं का सामना करना पड़ा है। लैंगिक पूर्वाग्रह ने उनके जीवन के कई पहलुओं को प्रभावित किया है। इस समस्या से निपटने के लिए, भारत का संविधान लैंगिक न्याय को एक मूलभूत सिद्धांत के रूप में सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाता है। इसकी प्रस्तावना सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय के साथ-साथ प्रतिष्ठा और अवसर की समानता, और व्यक्तिगत गरिमा को बनाए रखने वाले बंधुत्व का वादा करती है। यह महिलाओं को एक विशिष्ट समूह के रूप में स्पष्ट रूप से मान्यता देती है और उनके विरुद्ध सभी प्रकार के भेदभाव का निषेध करती है, जिससे शिक्षा, रोजगार और उन्नति में समान अवसरों का मार्ग प्रशस्त होता है।

2. भारतीय संविधान के अंतर्गत अनुच्छेद 14 महिलाओं को समानता के अधिकार की गारंटी देता है, जबकि अनुच्छेद 15(1) लिंग के आधार पर भेदभाव को स्पष्ट रूप से प्रतिबंधित करता है। इसके अतिरिक्त, अनुच्छेद 15(3) महिलाओं को लाभ पहुँचाने हेतु सकारात्मक और पुष्टिकारक कार्रवाई की अनुमति देता है। अनुच्छेद 16 सार्वजनिक रोजगार में समान अवसर सुनिश्चित करता है और लिंग सहित किसी भी आधार पर भेदभाव का निषेध करता है। महिलाओं की गरिमा को ठेस पहुँचाने वाली प्रथाओं को अस्वीकार करने के हमारे दायित्व को अनुच्छेद 51-ए के अंतर्गत एक मौलिक कर्तव्य का दर्जा दिया गया है। भारतीय संविधान के भाग IV में निहित राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत, राज्य को महिलाओं के मानवाधिकारों की रक्षा करने का निर्देश देते हैं, जिसमें समान कार्य के लिए समान वेतन, स्वास्थ्य अधिकार और मातृत्व लाभ शामिल हैं। वर्ष 1993 में अधिनियमित 73वें और 74वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम ने विभिन्न स्तरों पर महिलाओं के लिए 33% आरक्षण प्रदान करके शासन में महिलाओं की भागीदारी में उल्लेखनीय प्रगति की।

3. 20वीं सदी में महिला सशक्तिकरण आंदोलनों में वैश्विक स्तर पर तेज़ी देखी गई है। 1948 में स्थापित मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा, सभी व्यक्तियों के मौलिक अधिकारों और समान गरिमा में विश्वास की पुष्टि करती है, और लिंग के आधार पर भी किसी भी प्रकार के भेदभाव के बिना स्वतंत्रता पर ज़ोर देती है।

4. इन सिद्धांतों के अनुरूप, विधायिका ने लैंगिक समानता प्राप्त करने के उद्देश्य से अनेक कानून बनाए हैं, जो अंतर्राष्ट्रीय दायित्वों और संवैधानिक आदेशों, दोनों को पूरा करते हैं। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14, 15, 16 और 21 का व्यापक अध्ययन स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव करने वाले कोई भी कानून नहीं बनाए जा सकते या लागू नहीं किए जा सकते।

मामले का तथ्यात्मक मैट्रिक्स:

5. यह मामला पुरुष और महिला शिक्षकों के बीच घोर भेदभाव का एक ज्वलंत उदाहरण है। वर्ष 1998 तक शिक्षक ग्रेड III के पद पर नियुक्त पुरुष शिक्षकों को वर्ष 2008-09 और 2009-10 में रिक्त पदों पर शिक्षक ग्रेड II के पद पर पदोन्नति हेतु वरिष्ठता सूची में रखा गया, जबकि वर्ष 1986 तक नियुक्त महिला शिक्षकों को वर्ष 2009-2010 में रिक्त पदों पर शिक्षक ग्रेड II के उसी पद पर पदोन्नति

हेतु वरिष्ठता सूची में इस आधार पर रखा गया कि लड़कों के स्कूलों की तुलना में लड़कियों के स्कूलों की संख्या कम है।

6. राज्य-प्रतिवादियों की उपरोक्त कार्रवाई से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करते हुए, सभी याचिकाकर्ताओं ने निम्नलिखित प्रार्थना के साथ यह याचिका दायर करके इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है:-

प्रतिवादियों को निर्देश दिया जाए कि वे वर्ष 2008-09 और 2009-10 के लिए वरिष्ठ अध्यापक ग्रेड-II के पद पर पदोन्नति के लिए पात्र उम्मीदवारों की सूची में याचिकाकर्ताओं का नाम पुरुष शिक्षकों के लिए उनके द्वारा तैयार की गई सूची के अनुसार समान रूप से शामिल करें। प्रतिवादियों को यह भी निर्देश दिया जाए कि वे याचिकाकर्ताओं को उनकी योग्यता और वरिष्ठता के अनुसार वरिष्ठ अध्यापक ग्रेड-II के पद पर सभी परिणामी लाभों के साथ नियुक्त करें।

कोई अन्य उपयुक्त निर्देश, जो माननीय न्यायालय उपर्युक्त मामले की परिस्थितियों में उचित और उचित समझे, विनम्र याचिकाकर्ता के पक्ष में पारित किया जा सकता है।

इस रिट याचिका का खर्च भी याचिकाकर्ताओं को दिया जा सकता है।

7. इस रिट याचिका के माध्यम से याचिकाकर्ता ने प्रतिवादियों के विरुद्ध निर्देश मांगा है कि वे वर्ष 2008-2009 और 2009-2010 के लिए रिक्तियों के विरुद्ध वरिष्ठ अध्यापक ग्रेड-II के पद पर पदोन्नति के लिए पात्र उम्मीदवारों की सूची में याचिकाकर्ताओं का नाम शामिल करें और सभी परिणामी लाभों के साथ उनकी योग्यता और वरिष्ठता के अनुसार पदोन्नति के लिए उनके मामले पर विचार करें।

पक्षों के वकीलों द्वारा प्रस्तुतियां:

8. याचिकाकर्ता के वकील ने कहा कि वर्ष 2008-09 और 2009-10 के लिए रिक्तियों के विरुद्ध शिक्षक ग्रेड- III से शिक्षक ग्रेड- II के पद पर पदोन्नति के लिए वरिष्ठता सूची तैयार करते समय, प्रतिवादियों ने वर्ष 1998 तक नियुक्त पुरुष उम्मीदवारों को ध्यान में रखा है, जबकि उन्होंने केवल वर्ष 1986 तक नियुक्त महिला उम्मीदवारों पर विचार किया है, जो कि वर्ष 2008-09 और 2009-10 के लिए शिक्षक ग्रेड II के लिए पुरुष उम्मीदवारों के लिए निर्धारित वरिष्ठता सूची से 12 वर्ष पीछे है। वकील ने कहा कि ऐसा करने से प्रतिवादियों ने उम्मीदवारों के बीच भेदभाव किया है। वकील ने कहा कि महिला और पुरुष दोनों शिक्षक कानून की नजर में समान हैं और उनके साथ केवल उनके लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए। प्रतिवादियों की ऐसी कार्रवाई मनमानी है और भारत के संविधान के अनुच्छेद 14, 15(1) और 16 का उल्लंघन है। वकील ने दलील दी कि इन परिस्थितियों में, प्रतिवादियों को वर्ष 2008-09 और 2009-10 की रिक्तियों के विरुद्ध पदोन्नति के लिए याचिकाकर्ताओं के मामले पर विचार करने के लिए उचित निर्देश जारी किए जाएं।

9. प्रतिवादी के वकील ने याचिकाकर्ताओं के वकील द्वारा उठाए गए तर्कों का विरोध किया और कहा कि पुरुष शिक्षक और महिला शिक्षक दो अलग-अलग श्रेणियां हैं और इसलिए, दो

अलग-अलग वरिष्ठता सूचियाँ तैयार की गईं। वकील ने दलील दी कि लड़कों के स्कूलों की संख्या लड़कियों के स्कूलों की संख्या से ज्यादा है, इसलिए पुरुष शिक्षकों और महिला शिक्षकों की तैयार की गई वरिष्ठता सूची में अंतर है और प्रतिवादियों ने कोई अवैधता नहीं की है, जिसके लिए इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता हो।

विश्लेषण:

10. बार में प्रस्तुत प्रस्तुतियों को सुना और उन पर विचार किया तथा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया।

11. अभिलेख के अवलोकन से पता चलता है कि याचिकाकर्ता, जो महिला शिक्षक हैं, को अन्य पुरुष शिक्षकों के साथ बालक और बालिका विद्यालयों में विभिन्न क्षेत्रों में शिक्षक ग्रेड-III के पद पर नियुक्त किया गया था। अभिलेख आगे इंगित करता है कि जब प्रतिवादियों ने वर्ष 2008-09 और 2009-10 के लिए रिक्तियों के विरुद्ध शिक्षक ग्रेड-II की वरिष्ठता सूची तैयार की, तो उन्होंने दो अलग-अलग वरिष्ठता सूचियाँ तैयार कीं, एक पुरुष शिक्षकों के लिए और दूसरी महिला शिक्षकों के लिए। उपरोक्त सूचियाँ तैयार करते समय, उन्होंने वर्ष 1998 तक नियुक्त पुरुष शिक्षकों को बनाए रखा, जबकि केवल उन्हीं महिला शिक्षकों को बनाए रखा गया है जिनकी नियुक्ति वर्ष 1986 तक हुई थी, जो पुरुष उम्मीदवारों के लिए निर्धारित समय से 12 वर्ष पीछे है। ऐसा करके, प्रतिवादियों ने न केवल महिला और पुरुष शिक्षकों के बीच लैंगिक भेदभाव किया है, बल्कि पदोन्नति पद पर विचार के लिए याचिकाकर्ताओं की तरह महिला शिक्षकों के समानता के अधिकार का भी उल्लंघन किया है। अतः, प्रतिवादियों ने भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14, 15(1), 16 और 21 में निहित अपने मौलिक अधिकारों का उल्लंघन किया है। प्रतिवादियों का यह कृत्य पूरी तरह से मनमाना, अनुचित और निंदनीय है।

12. भारत में, लिंग के आधार पर भेदभाव को हमेशा से ही भारतीय संविधान के भाग III में प्रदत्त मौलिक अधिकारों का उल्लंघन माना गया है। संविधान का अनुच्छेद 14 व्यक्तियों के बीच समानता का प्रावधान करता है, अनुच्छेद 15(1) राज्य को अन्य बातों के अलावा, लिंग के आधार पर किसी के साथ भी भेदभाव करने से रोकता है, और किसी भी उद्देश्य के लिए लिंग के आधार पर नागरिकों के बीच वर्गीकरण का भी निषेध करता है, तथा अनुच्छेद 16(1) और (2) सार्वजनिक रोजगार के मामलों में समान अवसर से संबंधित हैं। ये निषेध पूर्ण और निरर्थक हैं।

संदर्भित निर्णय:-

13. पदोन्नति में महिलाओं के साथ भेदभाव के संबंध में सुप्रीम कोर्ट के पहले ऐतिहासिक फैसलों में से एक 1979 में सीबी मुथम्मा बनाम भारत संघ के मामले में आया था, जिसकी रिपोर्ट **(1979) 4 एससीसी 260** में दी गई थी। यह मामला भारतीय विदेश सेवा के भीतर लैंगिक भेदभाव के इर्द-गिर्द घूमता है, जिसमें सीबी मुथम्मा, भारतीय विदेश सेवा अधिकारी के रूप में नियुक्त होने वाली पहली महिला ने सेवा में प्रचलित भेदभावपूर्ण प्रथाओं का आरोप लगाया था, जिसके कारण उन्हें भारतीय विदेश सेवाओं के ग्रेड I में पदोन्नति के लाभ से वंचित कर दिया गया था। सुप्रीम कोर्ट के समक्ष, उन्होंने तर्क दिया था कि भारतीय विदेश सेवा (आचरण और अनुशासन) नियम, 1961 के प्रावधान

अनुच्छेद 14 और 16 के तहत उनके संवैधानिक अधिकारों का उल्लंघन करते हैं क्योंकि नियम, जैसा कि वे उस समय थे, महिला अधिकारियों को कुछ विदेशी पदों पर सेवा करने से प्रतिबंधित करते थे और उनकी पात्रता पर शर्तें लगाते थे। न्यायालय ने स्पष्ट लिंग-आधारित भेदभाव को स्वीकार किया और माना कि ये नियम वास्तव में समानता के संवैधानिक सिद्धांतों का उल्लंघन करते हैं। न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि संविधान सार्वजनिक रोजगार के मामलों में पुरुषों और महिलाओं दोनों को समान अवसरों की गारंटी देता है, और लिंग भेदभावपूर्ण व्यवहार का वैध मानदंड नहीं हो सकता। न्यायालय ने कहा:

5. इस नियम में महिलाओं के प्रति भेदभाव, अत्यंत पारदर्शी तरीके से, पाया जाता है। यदि किसी महिला सदस्य को विवाह से पहले सरकार की अनुमति लेनी पड़ती है, तो पुरुष सदस्य के विवाह करने पर भी सरकार को यही जोखिम उठाना पड़ता है। यदि सेवा की किसी महिला सदस्य की पारिवारिक और घरेलू प्रतिबद्धताएँ उसके कर्तव्यों के कुशल निर्वहन में बाधा बन सकती हैं, तो पुरुष सदस्य के मामले में भी ऐसी ही स्थिति उत्पन्न हो सकती है। एकल परिवारों, अंतर-महाद्वीपीय विवाहों और अपारंपरिक व्यवहार के इन दिनों में, कोई भी व्यक्ति अपनी प्रजाति के सज्जनों के प्रति खुले पूर्वाग्रह को समझने में विफल रहता है। भारतीय विदेश सेवा (भर्ती, संवर्ग, वरिष्ठता और पदोन्नति) नियम, 1961 का नियम 18 भी इसी पूर्वाग्रह से ग्रस्त है:

“(1)-(3) * * *

(4) कोई भी विवाहित महिला सेवा में नियुक्ति के अधिकार की हकदार नहीं होगी।”

6. पहली नज़र में यह नियम अनुच्छेद 16 की अवहेलना है। यदि एक विवाहित पुरुष को अधिकार है, तो एक विवाहित महिला, अन्य चीजें समान होने पर, इससे बदतर स्थिति में नहीं है। यह स्त्री-द्वेषी मुद्रा कमजोर लिंग को बेड़ियों में जकड़ने की मर्दवादी संस्कृति का नशा है, यह भूलकर कि राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिए हमारा संघर्ष भी महिला की दासता के खिलाफ एक लड़ाई थी। स्वतंत्रता अविभाज्य है, इसलिए न्याय भी। अनुच्छेद 14 और 16 में निहित हमारे मूलभूत विश्वास को भारत की आधी मानवता अर्थात् हमारी महिलाओं के संबंध में दुखद रूप से नजरअंदाज किया जाना चाहिए, यह किताब में संविधान और कार्यवाही में कानून के बीच की दूरी का दुखद प्रतिबिंब है। और यदि कार्यपालिका, संसद के प्रतिनिधि के रूप में, भाग III के विरुद्ध नियम बनाती है, खासकर जब उच्च राजनीतिक पद, यहां तक कि राजनयिक कार्यभार भी महिलाओं द्वारा भरा गया हो,

7. हमारा आशय यह सार्वभौमिक या हठधर्मितापूर्ण नहीं है कि पुरुष और महिला सभी व्यवसायों और सभी स्थितियों में समान हैं और हम उन मामलों में व्यावहारिकता की आवश्यकता को नकारते नहीं हैं जहाँ विशेष रोजगार की आवश्यकताएँ, लिंग की संवेदनशीलताएँ या सामाजिक क्षेत्रों की विशिष्टताएँ या किसी भी लिंग की बाधाएँ चयनात्मकता को बाध्य कर सकती हैं। लेकिन जहाँ विभेदीकरण प्रत्यक्ष है, वहाँ समानता का नियम लागू होना चाहिए। हमारे संविधान के इस सिद्धांत ने अंततः हमारे सरकारी चिंतन को प्रभावित किया है, शायद आंशिक रूप से इसी रिट याचिका के लंबित रहने के दबाव में। प्रति-शपथ पत्र में कहा गया है कि नियम 18(4) (जिसका पहले उल्लेख किया गया है) को 12 नवंबर, 1973 को हटा दिया

गया है। और इसी प्रकार, केंद्र सरकार के हलफनामे में कहा गया है कि नियम 8(2) विस्मृति की ओर अग्रसर है क्योंकि इसके विलोपन का राजपत्र में प्रकाशन किया जा रहा है। देर आए दुरुस्त आए। बहरहाल, हमें इन नियमों की जाँच करने या उन्हें रद्द करने की आवश्यकता से मुक्ति मिल गई है।

8. इस कार्यवाही के आरंभ होने के बाद याचिकाकर्ता को पदोन्नत किया गया है। क्या यह पोस्ट हॉक एगो प्रोप्टर हॉक का मामला है? जहाँ न्याय हो चुका है, वहाँ आगे की जाँच व्यर्थ है। केंद्र सरकार का कहना है कि हालाँकि याचिकाकर्ता को कुछ महीने पहले पदोन्नति के लिए पर्याप्त योग्य नहीं पाया गया था, अब उसे अच्छा पाया गया है और उसे पदोन्नत करके हेग में भारत का राजदूत नियुक्त किया गया है। उसकी केवल एक ही शिकायत बची है। उसके पहले मूल्यांकन और दूसरे मूल्यांकन के बीच कुछ महीनों के अंतराल में, उससे कनिष्ठ कुछ अधिकारी उससे ऊपर चले गए हैं। भारतीय आधिकारिक जीवन की भागदौड़ में, वरिष्ठता एक धार्मिक सम्मान प्राप्त करती दिख रही है। चूँकि याचिकाकर्ता का आगे का करियर सेवा के ग्रेड I में पूर्व जन्म के तथ्य से प्रभावित हो सकता है, इसलिए वरिष्ठता से जुड़ी उसकी शिकायत को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता। उसका मामला, विशेष रूप से वरिष्ठता पर केंद्रित, उससे कनिष्ठ अधिकारियों के संबंध में समीक्षा का पात्र है, जिन्हें कुछ महीनों के अंतराल में पदोन्नत किया गया है। अन्याय की भावना खलती है और इसे मिटा दिया जाना चाहिए ताकि रणनीतिक स्थिति में हर नौकर देश के लिए अपना सर्वश्रेष्ठ दे सके। हमें भारत संघ की ओर से उपस्थित विद्वान सॉलिसिटर जनरल की उपस्थिति का लाभ मिला है। उन्होंने अपनी विशिष्ट निष्पक्षता के साथ अपने मुवक्किल को उस बात पर सहमत होने के लिए राजी किया है जिसे हम एक उचित कदम मानते हैं, अर्थात् प्रतिवादी - भारत संघ - याचिकाकर्ता की वरिष्ठता की शीघ्र समीक्षा करेगा, उसकी योग्यता का पता चला है और ग्रेड II में उसकी वरिष्ठता को मान्यता दी गई है। हम तदनुसार निर्देश देते हैं।

9. ऊपर हमने जो कहा है, उसके अधीन, हम याचिका में किए गए दुर्भावनापूर्ण दावों की जाँच करना आवश्यक नहीं समझते। हम सरकार पर यह ज़ोर देना चाहते हैं कि लैंगिक भेदभाव के दाग को मिटाने के लिए सभी सेवा नियमों में आमूल-चूल परिवर्तन किया जाना चाहिए, बिना किसी रिट याचिका या लैंगिक दान से किसी प्रकार की प्रेरणा लिए।

10. हम याचिका को खारिज करते हैं, लेकिन समस्या को नहीं।

(जोर दिया गया)

14. अनुज गर्ग एवं अन्य बनाम होटल एसोसिएशन ऑफ इंडिया एवं अन्य के मामले में, **(2008) 3 एससीसी 1** में रिपोर्ट किए गए, सर्वोच्च न्यायालय ने एक ऐसे कानून को रद्द कर दिया, जो शराब पीने वाले परिसरों में महिलाओं के रोजगार पर रोक लगाता था। इस तरह के अप्रत्यक्ष रूप से भेदभावपूर्ण कानून को "रूढ़िवादी नैतिकता और यौन भूमिका की अवधारणाओं की असाध्य धारणाओं" द्वारा उत्पन्न माना गया। सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि व्यक्तिगत स्वायत्तता पर आघात करने वाले कानूनों की गहन न्यायिक जाँच होनी चाहिए, ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि कोई भी कानून, अपने अंतिम प्रभाव में, महिलाओं के उत्पीड़न को कायम न रखे। इसने आगे कहा कि "व्यक्तिगत स्वायत्तता अनुच्छेद 15 में उल्लिखित आधारों में अंतर्निहित है" और यह एक "मौलिक सिद्धांत है जिससे समझौता

नहीं किया जा सकता", जिसके लिए स्वायत्तता का उल्लंघन करने वाले किसी भी उपाय के मामलों में "उच्च स्तर की जाँच" की आवश्यकता होती है। न्यायालय ने टिप्पणी की:

"26. जब वर्गीकरण के कथित आधार पर भेदभाव करने की कोशिश की जाती है, तो ऐसा वर्गीकरण तर्कसंगत मानदंडों पर आधारित होना चाहिए। मानदंड जो किसी संवैधानिक प्रावधान के अभाव में और, यह बताना दोहराना होगा कि 20वीं सदी की शुरुआत में प्रचलित सामाजिक स्थितियों को ध्यान में रखते हुए, 21वीं सदी में तर्कसंगत मानदंड नहीं हो सकते हैं। 20वीं सदी की शुरुआत में, आतिथ्य क्षेत्र आम तौर पर महिलाओं के लिए खुला नहीं था। पिछले 60 वर्षों में, भारत में महिलाओं ने सार्वजनिक जीवन के सभी क्षेत्रों में प्रवेश प्राप्त किया है। वे जमीनी स्तर के लोकतंत्र में भी लोगों का प्रतिनिधित्व कर रही हैं। वे अब भारी परिवहन वाहनों के ड्राइवरों, सेवा गाड़ियों के कंडक्टर, पायलट आदि के रूप में कार्यरत हैं। महिलाओं को बहुराष्ट्रीय कंपनी के मुख्य कार्यकारी अधिकारी के पद के लिए चतुर्थ श्रेणी के पदों पर देखा जा सकता है। वे अब पुलिस और सेना दोनों सेवाओं में व्यापक रूप से स्वीकार की जाती हैं।

...

रूढ़िवादी भूमिकाएँ और विकल्पों का अधिकार

41. प्रोफेसर विलियम्स ने 7 वीमेन्स आरटीएस एल रेप, 175 (1982) में प्रकाशित द इक्वैलिटी क्राइसिस: सम रिफ्लेक्शंस ऑन कल्चर, कोर्ट्स एंड फेमिनिज्म में उन मुद्दों को नोट किया है जहां सांस्कृतिक मानदंडों और रूढ़ियों की पृष्ठभूमि में लिंगों के बीच जैविक भेद का आकलन किया जाता है। वह उन्हें "कठिन मामलों" के रूप में चिह्नित करती है। कठिन मामलों में, लिंगों के बीच जैविक अंतर का मुद्दा सामाजिक परिस्थितियों का इतना अधिक प्रभाव डालता है कि वास्तविक अंतर उस समय के दमनकारी सांस्कृतिक मानदंडों द्वारा स्पष्ट हो जाते हैं। जैविक और सामाजिक निर्धारकों का यह संयोजन लोकप्रिय विधायी जनादेश में अभिव्यक्ति पा सकता है। इस तरह के कानून निश्चित रूप से गहन न्यायिक जांच के पात्र हैं। यह समीक्षा करने के लिए न्यायालय का काम है कि नैतिक परंपरा में निहित बहुसंख्यक आवेग व्यक्तिगत स्वायत्तता पर अतिक्रमण न करें

42. इसलिए, ऐसे मामलों में तत्काल प्रासंगिक एक मुद्दा पारंपरिक सांस्कृतिक मानदंडों का प्रभाव और समाज में सामान्य परिवेश की स्थिति है, जिसका सामना महिलाओं को ऐसे रोजगार का चुनाव करते समय करना पड़ता है जो अन्यथा पुरुषों के लिए पूरी तरह से हानिरहित है। ऐसी परिस्थितियों में, प्रश्न राज्य के दृष्टिकोण के इर्द-गिर्द घूमता है।

43. राज्य को बार में महिलाओं के रोजगार पर पूरी तरह से प्रतिबंध लगाने के बजाय, उन तरीकों पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए जिनसे लिंग भेद के असमान परिणामों को समाप्त किया जा सके। राज्य का कर्तव्य है कि वह सुरक्षा के ऐसे हालात सुनिश्चित करे जो महिलाओं में अपने चुने हुए पेशे की आवश्यकताओं के अनुसार स्वतंत्र रूप से अपने कर्तव्य का निर्वहन करने का विश्वास जगाएँ। सामाजिक परिस्थितियों से कोई अन्य नीतिगत निष्कर्ष (जैसे कि धारा 30 के तहत निहित) महिलाओं पर दमनकारी और निजता के अधिकारों के विरुद्ध होगा।

44. अमेरिकी सर्वोच्च न्यायालय द्वारा शेरॉन ए. प्रंटियरो बनाम इलियट एल. रिचर्डसन [411 यूएस 677: 36 एल एड 2डी 583: 93 एस कोर्ट 1764 (1973)] में "रोमांटिक पितृसत्तावाद" की अवधारणा का वर्णन एक रोचक अध्ययन है। इसका अर्थ यह नहीं है कि भारतीय समाज की स्थिति भी ऐसी ही है और वह भी उसी हद तक कष्टदायक विधायी अतीत से ग्रस्त है, लेकिन फिर भी इसके भाव और संदर्भ को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता। सैन्य सेवा के इस मामले में न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की: (यूएस पृष्ठ 684-85)

"इसमें कोई संदेह नहीं कि हमारे देश में लैंगिक भेदभाव का एक लंबा और दुर्भाग्यपूर्ण इतिहास रहा है। परंपरागत रूप से, इस तरह के भेदभाव को 'रोमांटिक पितृसत्तावाद' के दृष्टिकोण से तर्कसंगत ठहराया जाता था, जो व्यावहारिक रूप से महिलाओं को किसी ऊँचे स्थान पर नहीं, बल्कि एक पिंजरे में रखता था। ... ऐसी धारणाओं के परिणामस्वरूप, हमारी क़ानून की किताबें धीरे-धीरे लिंगों के बीच घोर, रुढ़िबद्ध भेदों से भर गईं।..."

न्यायालय ने समीक्षा के लिए सख्त जांच मानक को भी बनाए रखा और प्रशासनिक सुविधा के तर्क को निम्नलिखित शब्दों में खारिज कर दिया: (प्रंटियरो केस [411 यूएस 677: 36 एल एड 2 डी 583: 93 एस सीटी 1764 (1973)], यूएस पीपी. 690-91) “

किसी भी स्थिति में, हमारे पिछले निर्णयों से यह स्पष्ट होता है कि, हालांकि सरकारी कार्यक्रमों का प्रभावकारी प्रशासन कुछ महत्व के बिना नहीं है, 'संविधान गति और दक्षता से अधिक उच्च मूल्यों को मान्यता देता है'। ... और जब हम 'कड़ी न्यायिक जांच' के दायरे में प्रवेश करते हैं, तो इसमें कोई संदेह नहीं रह जाता कि 'प्रशासनिक सुविधा' कोई ऐसी बात नहीं है, जिसका मात्र उच्चारण संवैधानिकता निर्धारित करता है। ... इसके विपरीत, कोई भी वैधानिक योजना जो केवल प्रशासनिक सुविधा प्राप्त करने के उद्देश्य से लिंगों के बीच एक स्पष्ट रेखा खींचती है, अनिवार्य रूप से 'समान स्थिति वाले पुरुषों और महिलाओं के लिए भिन्न व्यवहार' की मांग करती है, और इसलिए इसमें '[संविधान] द्वारा निषिद्ध एक प्रकार का मनमाना विधायी विकल्प शामिल होता है...।'। इसलिए हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि, प्रशासनिक सुविधा प्राप्त करने के एकमात्र उद्देश्य के लिए वर्दीधारी सेवाओं के पुरुष और महिला सदस्यों के साथ भिन्न व्यवहार करके, चुनौती दिए गए क़ानून पाँचवें संशोधन के उचित प्रक्रिया खंड का उल्लंघन करते हैं...।”

45. इसी तरह के एक अन्य मामले में, अलबामा राज्य की दंड व्यवस्था में महिलाओं के लिए सुरक्षा गार्ड या सुधारक परामर्शदाता के पद पर नियुक्ति पर प्रभावी प्रतिबंध था। इस जेल में यौन अपराधी रखे जाते थे और इस आधार पर बहुमत की राय ने अन्य बातों के साथ-साथ इस प्रतिबंध को बरकरार रखा। जस्टिस मार्शल की असहमति एक प्रगतिशील प्रतिमान के भीतर विभिन्न मुद्दों को दर्शाती है। डोथर्ड बनाम रॉलिंग्सन [433 यूएस 321 : 53 एल एड 2डी 786 : 97 एस कोर्ट 2720 (1977)] में असहमति निम्नलिखित शब्दों में उपयोगी सलाह के रूप में कार्य करती है:

ऐसा प्रतीत होता है कि न्यायालय के दृष्टिकोण में वास्तविक अयोग्यता कारक 'कर्मचारी का नारीत्व' है। न्यायालय अलबामा की जेलों में यौन अपराधियों की बड़ी संख्या और 'इस

संभावना का उल्लेख करता है कि कैदी किसी महिला पर इसलिए हमला करेंगे क्योंकि वह एक महिला है। संक्षेप में, इस निर्णय का मूल औचित्य यह है कि महिला रक्षक के रूप में यौन हमले करेंगी। पूरे सम्मान के साथ, यह तर्क महिलाओं के बारे में सबसे कपटी मिथकों में से एक को, जो कि जानबूझकर या अनजाने में, मोहक यौन वस्तुएँ हैं, दुर्भाग्य से, कायम रखता है। मुझे यकीन है कि नेक इरादों से लिए गए इस निर्णय का प्रभाव महिलाओं को दंडित करना है क्योंकि उनकी उपस्थिति ही यौन हमलों को भड़का सकती है। जेल के कैदियों के भ्रष्ट आचरण की धमकी के कारण महिलाओं को ही नौकरी के अवसरों से वंचित होकर कीमत चुकानी पड़ती है। एक बार फिर, 'जिस आसन पर महिलाओं को रखा गया है, वह करीब से देखने पर एक पिंजरे के रूप में सामने आया है।' यह विशेष रूप से विडंबनापूर्ण है कि यहाँ पिंजरा कैद अपराधियों के दुर्व्यवहार की आशंका के जवाब में बनाया गया है।

उन्होंने सुरक्षात्मक भेदभाव (आवरण के रूप में) की प्रकृति को भी निम्नलिखित शब्दों में नोट किया है:

“न्यायालय ने रिकॉर्ड में इस दावे का समर्थन करने वाला कोई सबूत नहीं दिया है कि 'कैदियों द्वारा किसी महिला पर इसलिए हमला करने की संभावना' है क्योंकि वह महिला है। शायद न्यायालय सामान्य ज्ञान, या 'सहज ज्ञान' पर निर्भर करता है। लेकिन इस भावनात्मक रूप से बोझिल संदर्भ में खतरा यह है कि सामान्य ज्ञान का इस्तेमाल 'रोमांटिक पितृसत्ता' और लगातार भेदभावपूर्ण रवैये को छिपाने के लिए किया जाएगा, जिससे न्यायालय उचित रूप से परहेज़ करता है। मेरे लिए, सहज ज्ञान का एकमात्र मामला यह है कि गार्डों पर यौन प्रेरित हमलों की घटनाएँ, 'कैदियों द्वारा किसी गार्ड पर इसलिए हमला करने की संभावना' की तुलना में नगण्य होंगी क्योंकि वह गार्ड है। महिला और पुरुष दोनों गार्डों पर अपरिहार्य हमलों का उचित जवाब कानून का पालन करने वाली उन महिलाओं के रोज़गार के अवसरों को सीमित करना नहीं है जो अपने समुदाय में योगदान देना चाहती हैं, बल्कि कैदी अपराधियों के खिलाफ़ त्वरित और सुनिश्चित दंडात्मक कार्रवाई करना है। संभवतः, अलबामा जेल प्रणाली का एक लक्ष्य कैदियों के असामाजिक व्यवहार के पैटर्न का उन्मूलन है ताकि कैदी एक दिन स्वतंत्र समाज में रह सकें। यौन अपराधी इस प्रक्रिया की शुरुआत कर सकते हैं। महिला गार्डों के साथ सामाजिक रूप से स्वीकार्य तरीके से संबंध बनाना सीखकर। दोषी अपराधियों के डरावने व्यवहार के कारण महिलाओं को नौकरी के अवसरों से वंचित करना हमारी सामाजिक प्राथमिकताओं को उलट देना है।”

46. यह ध्यान में रखना होगा कि इस तरह के "सुरक्षात्मक भेदभाव" जैसे स्पष्ट उद्देश्यों वाले कानून, संभावित रूप से दोधारी तलवार की तरह काम करते हैं। इस प्रकार के कानूनों के निहितार्थों का आकलन करते समय कठोर जाँच-पड़ताल की जानी चाहिए। कानून का मूल्यांकन केवल उसके प्रस्तावित उद्देश्यों के आधार पर नहीं, बल्कि उसके निहितार्थों और प्रभावों के आधार पर किया जाना चाहिए। विवादित कानून रूढ़िवादी नैतिकता और यौन भूमिका की अवधारणा की असाध्य जड़ता से ग्रस्त है। इस प्रकार प्राप्त दृष्टिकोण विषयवस्तु में पुराना और साधनों में दमघोंटू है।

47. किसी भी कानून का अंतिम प्रभाव महिलाओं के उत्पीड़न को जारी रखने वाला नहीं होना चाहिए। व्यक्तिगत स्वतंत्रता एक मूलभूत सिद्धांत है जिससे सुविधा के नाम पर तब तक समझौता नहीं किया जा सकता जब तक कि कोई बाध्यकारी राज्य उद्देश्य न हो। ऐसे मामलों में न्यायिक समीक्षा के लिए गहन जाँच-पड़ताल ही मानक सीमा है।

(जोर दिया गया)

अनुपात निर्णायकः

15. इसी कानूनी पृष्ठभूमि में इस न्यायालय द्वारा वर्तमान याचिका पर निर्णय लिया जाना है। याचिकाकर्ता, जो शिक्षिका ग्रेड III के पद पर कार्यरत महिला हैं, प्रतिवादियों द्वारा किए गए स्पष्ट भेदभाव से व्यथित हैं, क्योंकि उन्हें शिक्षक ग्रेड II के पद पर केवल इसलिए पदोन्नति नहीं दी गई क्योंकि उनकी नियुक्ति वर्ष 1986 के बाद हुई थी, जबकि पुरुष शिक्षक ग्रेड III, जो वर्ष 1986 से 1998 तक इसी पद पर नियुक्त रहे, को भी उक्त पद पर पदोन्नति के लिए विचार किया गया था। प्रतिवादियों ने इस बहिष्कार को इस आधार पर उचित ठहराया है कि लड़कियों के स्कूलों की तुलना में लड़कों के स्कूलों की संख्या अधिक है और इसलिए, पुरुष शिक्षकों की आवश्यकता महिला शिक्षकों की तुलना में अधिक है।

16. हालाँकि यह नियम ऊपरी तौर पर एक खास लिंग के शिक्षकों की माँग के आधार पर वर्गीकरण करता है, लेकिन इस वर्गीकरण का असर महिला शिक्षकों पर पड़ता है, और इस प्रकार, यह नियम पुरुषों और महिलाओं के बीच मौजूदा असमानताओं की पुष्टि करके सामाजिक पदानुक्रम को और मज़बूत करता है। उपरोक्त वर्गीकरण का यह अनुचित अर्थ है कि केवल पुरुष शिक्षक ही लड़कों के स्कूल में पढ़ाने के लिए पर्याप्त सक्षम हैं, इस प्रकार महिला शिक्षकों को उनके समकक्षों की तुलना में एक घटिया वर्ग माना जाता है।

17. अनुच्छेद 14 की पारंपरिक और औपचारिक व्याख्या, जैसा कि विभिन्न निर्णयों से देखा जा सकता है, यह दर्शाती है कि संविधान के अनुच्छेद 14 के अंतर्गत उचित वर्गीकरण के लिए दो मानदंड पूरे होने चाहिए: (i) वर्गीकरण एक सुबोध विभेद पर आधारित होना चाहिए; और (ii) विभेद का विधान द्वारा प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य से तर्कसंगत संबंध होना चाहिए। [पश्चिम बंगाल राज्य बनाम अनवर अली सरकार, (1952) 1 एससीसी 1] दूसरे शब्दों में, वर्गीकरण के आधार और कानून के उद्देश्य के बीच एक कारण-कार्य संबंध होना चाहिए। यदि वर्गीकरण का उद्देश्य अतार्किक, अनुचित और अन्यायपूर्ण है, तो वर्गीकरण अनुचित होगा। [दीपक सिब्बल बनाम पंजाब विश्वविद्यालय, (1989) 2 एससीसी 145]

18. हालाँकि, सर्वोच्च न्यायालय ने नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ (2018) 10 एससीसी 1 में एक कदम आगे बढ़कर स्वतंत्रता और मौलिक समानता की विकासशील प्रकृति और अनुच्छेद 14 की औपचारिक व्याख्या की सीमाओं को मान्यता दी। न्यायालय ने कहा:

“409. समानता की विषयवस्तु को उस वर्गीकरण की युक्तिसंगतता के साथ समतुल्य मानना, जिस पर कोई कानून आधारित है, विधिक औपचारिकता को बढ़ावा देता है। वर्गीकरण परीक्षण की समस्या यह है कि युक्तिसंगत

वर्गीकरण को केवल एक सूत्र तक सीमित कर दिया जाता है: एक सुबोध विभेदीकरण की खोज और प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य से तर्कसंगत संबंध। ऐसा करने पर, वर्गीकरण परीक्षण स्वरूप को सार से ऊपर उठाने का जोखिम उठाता है। विधिक औपचारिकता में निहित खतरा संवैधानिक अधिकारों के मूल्यांकन की प्रक्रिया को निर्देशित करने वाले मूल्यों को स्पष्ट रूप से स्थापित करने में इसकी अक्षमता में निहित है। विधिक औपचारिकता संविधान की जीवनदायी शक्तियों को केवल एक मंत्र के नीचे दबा देती है। यह इस बात की उपेक्षा करती है कि अनुच्छेद 14 में मूल्यों का एक सशक्त कथन निहित है—विधि के समक्ष समानता और विधियों के समान संरक्षण के सार का। इसे वर्गीकरण के एक औपचारिक अभ्यास तक सीमित करने से राज्य की कार्यवाही में मनमानी के विरुद्ध सुरक्षा के रूप में समानता के वास्तविक मूल्य को नज़रअंदाज़ किया जा सकता है। जैसे-जैसे हमारा संवैधानिक न्यायशास्त्र स्वतंत्रता और समानता के मूल तत्व को पहचानने की दिशा में विकसित हुआ है, अनुच्छेद 14 का मूल उभर कर सामने आया है। वर्गीकरण की छाया से। अनुच्छेद 14 में एक मूलभूत तत्व है जिस पर स्वतंत्रता और गरिमा के साथ-साथ संविधान की इमारत खड़ी है। सीधे शब्दों में कहें तो, इस अवतार में, यह मानव प्रयास के हर पहलू और मानव अस्तित्व के हर पहलू में व्यक्ति के साथ निष्पक्ष व्यवहार सुनिश्चित करने की इच्छा को दर्शाता है।

...

428. जब किसी कानून की संवैधानिकता को इस आधार पर चुनौती दी जाती है कि वह संविधान के भाग III में प्रदत्त गारंटियों का उल्लंघन करता है, तो निर्णायक बात यह है कि मौलिक अधिकारों के उल्लंघन पर उसका क्या प्रभाव पड़ेगा। [केरल शिक्षा विधेयक, 1957, इन रे, एआईआर 1958 एससी 956 पैरा 26 पर; सकाल पेपर्स (प्रा.) लिमिटेड बनाम भारत संघ, एआईआर 1962 एससी 305 पैरा 42 पर; रुस्तम कैवसजी कूपर बनाम भारत संघ, (1970) 1 एससीसी 248 पैरा 43, 49; बेनेट कोलमैन एंड कंपनी बनाम भारत संघ, (1972) 2 एससीसी 788 पैरा 39; मेनका गांधी बनाम भारत संघ, (1978) 1 एससीसी 248 पैरा 19.] यह राज्य के इस दावे के खिलाफ गारंटीकृत स्वतंत्रता को उनकी वास्तविक क्षमता प्रदान करता है कि अधिकार का उल्लंघन प्रावधान का उद्देश्य नहीं था। यह कानून का उद्देश्य नहीं है जो नागरिकों के अधिकारों को कम करता है। न ही की गई कार्यवाही का रूप उस सुरक्षा को निर्धारित करता है जिसका दावा किया जा सकता है। यह मौलिक अधिकार पर कानून का प्रभाव है जो अदालतों को हस्तक्षेप करने और उल्लंघन का समाधान करने के लिए कहता है। व्यक्ति दुखी होता है क्योंकि कानून दुख पहुंचाता है। व्यक्ति को हुए दुख को संरक्षित अधिकार के उल्लंघन से मापा जाता है। इसलिए, यह आकलन करते समय कि क्या कोई कानून मौलिक अधिकार का उल्लंघन करता है, यह निर्णायक नहीं है कि कानून निर्माता का इरादा है, बल्कि यह निर्णायक है कि क्या कानून का प्रभाव या संचालन मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करता है।

.....

438. किसी भेदभावपूर्ण कृत्य की संवैधानिक मूल्यों के आधार पर जाँच की जाएगी। कोई भेदभाव संवैधानिक जाँच में टिक नहीं पाएगा यदि वह

अनुच्छेद 15(1) में निषिद्ध आधारों से गठित किसी वर्ग के बारे में रूढ़िबद्ध धारणाओं पर आधारित हो और उन्हें कायम रखे। यदि भेदभाव का कोई भी आधार, चाहे प्रत्यक्ष हो या अप्रत्यक्ष, लिंग की भूमिका की रूढ़िबद्ध समझ पर आधारित हो, तो उसे अनुच्छेद 15 द्वारा केवल लिंग के आधार पर निषिद्ध भेदभाव से अलग नहीं किया जा सकेगा। यदि रूढ़िबद्ध धारणाओं पर आधारित कुछ विशेषताओं को अनुच्छेद 15(1) में निषिद्ध किसी भी आधार द्वारा समूहों के रूप में गठित लोगों के संपूर्ण वर्गों के साथ जोड़ा जाए, तो भेदभाव करने का कोई स्वीकार्य कारण स्थापित नहीं किया जा सकता। ऐसा भेदभाव अनुच्छेद 15(1) में भेदभाव के विरुद्ध संवैधानिक गारंटी का उल्लंघन होगा। यह कि ऐसा भेदभाव लिंग और अन्य विचारों पर आधारित आधारों का परिणाम है, अब भेदभाव कैसे संचालित होता है, इसकी अंतर्विभागीय समझ द्वारा समर्थित स्थिति नहीं मानी जा सकती। यह अनुच्छेद 15 को वास्तविक कठोरता प्रदान करता है ताकि इसे भेदभाव को प्रतिबंधित करने में एक पूर्ण संवैधानिक आयाम प्रदान किया जा सके।

440. अनुच्छेद 15(1) के अंतर्गत केवल लिंग के आधार पर भेदभाव के निषेध के अधिकार क्षेत्र से बाहर होने के कारण चुनौती दिए गए किसी प्रावधान का मूल्यांकन, उसे लागू करने के राज्य के उद्देश्यों के आधार पर नहीं, बल्कि प्रभावित व्यक्तियों और उनके मौलिक अधिकारों पर उस प्रावधान के प्रभाव के आधार पर किया जाना चाहिए। भेदभाव का कोई भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष आधार, जो लिंग की भूमिका की किसी विशेष समझ पर आधारित हो, उस भेदभाव से अलग नहीं होगा जो अनुच्छेद 15 द्वारा केवल लिंग के आधार पर निषिद्ध है।

(जोर दिया गया)

19. इस प्रकार, उपर्युक्त निर्णयों से यह स्पष्ट है कि कोई भेदभाव संवैधानिक जाँच में टिक नहीं पाएगा यदि वह अनुच्छेद 15(1) में निषिद्ध आधारों द्वारा गठित किसी वर्ग के बारे में रूढ़िबद्ध धारणाओं पर आधारित हो और उन्हें कायम रखे। यदि भेदभाव का कोई भी आधार, चाहे प्रत्यक्ष हो या अप्रत्यक्ष, लिंग की भूमिका की रूढ़िबद्ध समझ पर आधारित हो, तो उसे उस भेदभाव से अलग नहीं किया जा सकेगा जो अनुच्छेद 15 द्वारा केवल लिंग के आधार पर निषिद्ध है। अनुच्छेद 15(1) के तहत केवल लिंग के आधार पर भेदभाव के निषेध के अधिकार क्षेत्र से बाहर होने के कारण चुनौती दिए गए किसी प्रावधान का मूल्यांकन राज्य द्वारा उसे लागू करने के उद्देश्यों के आधार पर नहीं, बल्कि उस प्रावधान के प्रभावित व्यक्तियों और उनके मौलिक अधिकारों पर पड़ने वाले प्रभाव के आधार पर किया जाना चाहिए।

20. वर्तमान मामले में उपरोक्त निर्णयों में निर्धारित मानकों के आधार पर, पहले से ही वंचित या असुरक्षित वर्ग (यहाँ, महिलाएँ) पर नियम का प्रभाव वर्गीकरण परीक्षण के पारंपरिक सूत्रीकरण के लिए अप्रासंगिक है, जिसके लिए केवल एक सुबोध अंतर (यहाँ, 1998 तक नियुक्त पुरुष शिक्षकों और केवल 1986 तक नियुक्त महिला शिक्षकों के बीच) की आवश्यकता है, जिसका वर्गीकरण के उद्देश्य (यहाँ, लड़कों के स्कूलों की अधिक संख्या के परिणामस्वरूप पुरुष शिक्षकों की अधिक माँग) से तर्कसंगत संबंध हो। इस प्रकार, पारंपरिक वर्गीकरण परीक्षण यह पहचानने में विफल रहता है कि नियम, यद्यपि ऊपरी तौर पर तटस्थ और अहानिकर है और लिंग पर आधारित नहीं है, वास्तव में

बेहतर शैक्षिक परिणामों के किसी प्रमाण के बजाय, पुरातन लैंगिक रूढ़िवादिता के आधार पर, पुरुष शिक्षकों को अधिक अनुपात में पदोन्नति देकर पुरुषों और महिलाओं के बीच अंतर को और गहरा कर रहा है। जो मायने रखता है वह मौलिक अधिकारों के प्रयोग पर कानून का प्रभाव है, जो अदालतों को हस्तक्षेप करने और उल्लंघन को दूर करने के लिए प्रेरित करता है।

21. वर्तमान मामले में, हम पाते हैं कि यह भेदभाव का एक स्पष्ट मामला है, एक ऐसा भेदभाव जो संविधान के अनुच्छेद 14 के अंतर्गत ही नहीं आता बल्कि संविधान के अनुच्छेद 15(1) और अनुच्छेद 16(2) में विशिष्ट निषेध के अंतर्गत भी आता है। राज्य को यह आदेश कि वह किसी भी नागरिक के साथ लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं करेगा और सार्वजनिक रोजगार के मामलों में अवसर की समानता सुनिश्चित करेगा, सबसे महत्वपूर्ण मौलिक नियमों में से एक है जिसका कड़ाई से पालन किया जाना आवश्यक है। संविधान के अनुच्छेद 19 में स्वतंत्रताओं के विपरीत, संविधान के अनुच्छेद 15(1) और 16(2) के तहत अधिकारों के पूर्ण दायरे को प्रतिबंधित करने की कोई गुंजाइश नहीं है। नियुक्ति और पदोन्नति के मामले में पुरुष और महिला लिंग के बीच अंतर करने को उचित ठहराने की कोई गुंजाइश नहीं होगी। महिला क्या काम कर सकती है और क्या नहीं, इस काल्पनिक धारणा के आधार पर महिलाओं के अधिकार को नकारा नहीं जाना चाहिए।

22. सर्वोच्च न्यायालय ने अजय कुमार शुक्ला बनाम अरविंद राय एवं अन्य, **(2022) 12 एससीसी 579** में प्रतिवेदित मामले में, अनेक उदाहरणों का हवाला देते हुए, स्पष्ट रूप से यह माना है कि यद्यपि पदोन्नति के अधिकार को मौलिक अधिकार नहीं माना जाता है, फिर भी पदोन्नति के लिए विचार अब मौलिक अधिकार के रूप में विकसित हो गया है। न्यायालय ने टिप्पणी की:

"40. पक्षकारों द्वारा यह भी स्वीकार किया जाता है कि उच्चतर ग्रेड में कनिष्ठ अभियंताओं की अगली पदोन्नति सहायक अभियंता के पद पर होती है। सहायक अभियंता संवर्ग में कोई अलग शाखा नहीं होती, बल्कि सहायक अभियंताओं का केवल एक ही संवर्ग होता है। कनिष्ठ अभियंता संवर्ग की वरिष्ठता सूची ही सहायक अभियंताओं के पद के लिए फीडर संवर्ग होगी। वर्ष 2001 के चयन के कृषि शाखा के कनिष्ठ अभियंताओं को यांत्रिक और सिविल शाखा के उसी चयन में चयनित कनिष्ठ अभियंताओं पर सीधा अधिकार होगा, भले ही उनमें से कुछ या अनेक की समग्र योग्यता समान हो। कृषि क्षेत्र के कनिष्ठ अभियंताओं का वेतन यांत्रिक और सिविल क्षेत्र के कुछ या अनेक अभियंताओं से कम हो सकता है। नियुक्ति प्राधिकारी को आयोग द्वारा तैयार चयन परीक्षा में प्राप्त अंकों के आधार पर प्रदर्शन या दक्षता के आधार पर एक संयुक्त योग्यता सूची तैयार करनी चाहिए थी। अन्यथा, यह कम योग्यता वाले अभ्यर्थी की तुलना में अधिक योग्य अभ्यर्थी को पदोन्नति के लिए विचार किए जाने के अधिकार से वंचित करने के समान होगा। पदोन्नति के अधिकार को मौलिक अधिकार नहीं माना जाता है, लेकिन अब पदोन्नति के लिए विचार को मौलिक अधिकार के रूप में विकसित किया गया है।"

41. इस न्यायालय ने बार-बार इस बात पर जोर दिया है कि पदोन्नति के लिए विचार किए जाने का अधिकार मौलिक अधिकार है, जैसा कि लिफ्ट इरिगेशन कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम प्रवात में न्यायमूर्ति के. रामास्वामी ने माना था। किरण मोहंती [लिफ्ट इरिगेशन कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम प्रवात

किरण मोहंती, (1991) 2 एससीसी 295: 1991 एससीसी (एल एंड एस) 472] रिपोर्ट के पैरा 4 में जो नीचे पुनः प्रस्तुत है: (एससीसी पृष्ठ 299)

4. ... पदोन्नति का कोई मौलिक अधिकार नहीं है, बल्कि किसी कर्मचारी को केवल प्रासंगिक नियमों के अनुसार, जब भी पदोन्नति की आवश्यकता हो, उसके लिए विचार किए जाने का अधिकार है। इस दृष्टिकोण से, हमारे विचार में, उच्च न्यायालय का यह निष्कर्ष कि निगम द्वारा तैयार की गई पदक्रम सूची संविधान के अनुच्छेद 16 के साथ अनुच्छेद 14 के तहत प्रतिवादी-रिट याचिकाकर्ता के समानता के अधिकार का उल्लंघन है, और प्रतिवादी-रिट याचिकाकर्ता को इससे अनुचित रूप से वंचित किया गया, स्पष्ट रूप से अनुचित है।

42. अजीत सिंह (2) बनाम पंजाब राज्य [अजीत सिंह (2) बनाम पंजाब राज्य, (1999) 7 एससीसी 209: 1999 एससीसी (एल एंड एस) 1239] में संविधान पीठ ने भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 और अनुच्छेद 16(1) पर जोर देते हुए कहा कि अगर कोई व्यक्ति पदोन्नति की पात्रता और मानदंडों को पूरा करता है, लेकिन फिर भी उसकी पदोन्नति पर विचार नहीं किया जाता है, तो यह उसके मौलिक अधिकार का स्पष्ट उल्लंघन होगा। जस्टिस जगन्नाथ राव ने अपनी और जस्टिस आनंद, मुख्य न्यायाधीश, वेंकटस्वामी, पटनायक, कुर्दकर, जस्टिस की ओर से बोलते हुए, पैरा 22 और 27 में निम्नलिखित टिप्पणी की: (एससीसी पृष्ठ 227-28)

“अनुच्छेद 14 और 16(1): क्या पदोन्नति के लिए मौलिक अधिकार माना जाना सही है

22. अनुच्छेद 14 और अनुच्छेद 16(1) आपस में घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं। ये व्यक्ति के व्यक्तिगत अधिकारों से संबंधित हैं। अनुच्छेद 14 मांग करता है कि 'राज्य किसी भी व्यक्ति को कानून के समक्ष समानता या कानूनों के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा'। अनुच्छेद 16(1) एक सकारात्मक आदेश जारी करता है कि:

'राज्य के अधीन किसी भी पद पर रोजगार या नियुक्ति से संबंधित मामलों में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समानता होगी'।

इस न्यायालय द्वारा बार-बार यह माना गया है कि अनुच्छेद 16 का खंड (1) अनुच्छेद 14 का एक पहलू है और इसकी जड़ें अनुच्छेद 14 से हैं। उक्त खंड अनुच्छेद 14 में व्यापकता को विशिष्ट करता है और संवैधानिक अर्थ में राज्य के अधीन किसी भी पद पर रोजगार और नियुक्ति के मामलों में "अवसर की समानता" की पहचान करता है। "रोजगार" शब्द व्यापक होने के कारण, इसमें कोई विवाद नहीं है कि यह भर्ती के प्रारंभिक स्तर से ऊपर के पदों पर पदोन्नति के पहलू को अपने दायरे में लेता है। अनुच्छेद अनुच्छेद 16(1) प्रत्येक कर्मचारी को, जो अन्यथा पदोन्नति के लिए पात्र है या जो विचाराधीन क्षेत्र में आता है, पदोन्नति के लिए "विचार" किए जाने का मौलिक अधिकार प्रदान करता है। यहाँ समान अवसर का अर्थ है पदोन्नति के लिए "विचार" किए जाने का अधिकार। यदि कोई व्यक्ति पात्रता और क्षेत्र के मानदंडों को पूरा करता है, लेकिन पदोन्नति के लिए विचार नहीं किया जाता है, तो पदोन्नति के लिए "विचार" किए जाने के उसके मौलिक अधिकार, जो उसका व्यक्तिगत अधिकार है, का स्पष्ट उल्लंघन होगा।

समान अवसर और ऐसी पदोन्नति से जुड़ी वरिष्ठता के आधार पर "पदोन्नति" अनुच्छेद 16(1) के तहत मौलिक अधिकार के पहलू हैं

27. हमारी राय में, अशोक कुमार गुप्ता [अशोक कुमार गुप्ता बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (1997) 5 एससीसी 201: 1997 एससीसी (एल एंड एस) 1299] में व्यक्त उपरोक्त विचार और जगदीश में अनुसरण किया गया लाल [जगदीश लाल बनाम हरियाणा राज्य, (1997) 6 एससीसी 538: 1997 एससीसी (एल एंड एस) 1550] और अन्य मामलों में, यदि यह निर्धारित करने का इरादा है कि पदोन्नति द्वारा भर्ती के प्रासंगिक नियमों के अनुसार पदोन्नति के लिए "विचार" किए जाने के लिए कर्मचारियों को गारंटीकृत अधिकार (यानी वरिष्ठता या योग्यता के आधार पर) केवल एक वैधानिक अधिकार है और मौलिक अधिकार नहीं है, हम प्रस्ताव को स्वीकार नहीं कर सकते। हमने पहले ही कहा है कि पदोन्नति के मामले में पदोन्नति के लिए "विचार" किए जाने के अधिकार के अर्थ में समान अवसर का अधिकार वास्तव में अनुच्छेद 16(1) के तहत गारंटीकृत एक मौलिक अधिकार है और अशोक कुमार गुप्ता [अशोक कुमार गुप्ता बनाम यूपी राज्य, (1997) 5 एससीसी 201: 1997 एससीसी (एल एंड एस) 1299] से पहले किसी अन्य मामले में इस पर कभी संदेह नहीं किया गया है।

43. इस न्यायालय ने एचएम सिंह बनाम भारत संघ [एचएम सिंह बनाम भारत संघ, (2014) 3 एससीसी 670 : (2014) 1 एससीसी (एल एंड एस) 649] में, कानूनी स्थिति, अर्थात् पदोन्नति के लिए विचार किए जाने के अधिकार को भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और अनुच्छेद 16 के तहत एक मौलिक अधिकार के रूप में पुनः दोहराया। पैरा 28 से प्रासंगिक उद्धरण नीचे पुनः प्रस्तुत है: (एससीसी पृष्ठ 686)

28. विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या अपीलकर्ता के दावे पर विचार न करने से उसे भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 के तहत प्रदत्त मौलिक अधिकारों का उल्लंघन होगा। उपर्युक्त प्रश्न का उत्तर 'हाँ' में होगा, बशर्ते कि प्रतिवादी 1-1-2007 को उपलब्ध लेफ्टिनेंट-जनरल के पद को भरने के इच्छुक हों। प्रति-शपथपत्र में दर्शाई गई तथ्यात्मक स्थिति से पता चलता है कि प्रतिवादी वास्तव में उक्त रिक्ति को भरने के इच्छुक थे। मामले के उपरोक्त दृष्टिकोण से, यदि अपीलकर्ता विचारणीय पात्र वरिष्ठतम सेवारत मेजर-जनरल थे (जो निस्संदेह थे), तो उन्हें निश्चित रूप से उपरोक्त रिक्ति के विरुद्ध विचार किए जाने का मौलिक अधिकार था, और यदि उन्हें उपयुक्त पाया जाता तो पदोन्नति का मौलिक अधिकार भी था। ऐसा न करने पर, उन्हें भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 द्वारा प्रदत्त विधि के समक्ष समानता और विधियों के समान संरक्षण के अपने मौलिक अधिकार से वंचित कर दिया जाएगा। हमारा मानना है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 में प्रदत्त मौलिक अधिकार का लाभ देने के लिए ही उन्हें दो बार सेवा विस्तार दिया गया था, पहला 29 फरवरी 2008 के राष्ट्रपति के आदेश द्वारा और उसके बाद 30 मई 2008 के एक और राष्ट्रपति के आदेश द्वारा। उपरोक्त आदेश स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि अपीलकर्ता को तीन महीने की अवधि के लिए (और एक महीने की अतिरिक्त अवधि के लिए) या एससीसी के अनुमोदन तक, जो भी पहले हो, सेवा विस्तार दिया गया था। उपरोक्त

आदेशों के द्वारा, प्रतिवादी अपीलकर्ता के साथ न्यायोचित व्यवहार करना चाहते थे, ताकि वह लेफ्टिनेंट जनरल के पद पर पदोन्नति का सम्मान प्राप्त कर सकें (यदि चयन बोर्ड द्वारा उनके पक्ष में की गई सिफारिश को कैबिनेट की नियुक्ति समिति द्वारा अनुमोदित किया गया था, तो यह पुष्टि की जाती है)। अपीलकर्ता को लेफ्टिनेंट-जनरल के पद पर पदोन्नति के लिए उचित सम्मान से वंचित करने की प्राधिकारियों की कार्रवाई से भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 के तहत उसके मौलिक अधिकार का उल्लंघन होता। प्रतिवादियों द्वारा की गई ऐसी कार्रवाई निस्संदेह मनमानी होती।”

44. यदि वरिष्ठता सूची को बरकरार रखा जाता है, तो यांत्रिक और सिविल शाखाओं में कृषि शाखा के कनिष्ठ अभियंताओं से अधिक योग्य अभियंता पदोन्नति के लिए विचार किए जाने के अपने अधिकार से वंचित हो जाएंगे, और वास्तव में उनका अधिकार तभी प्राप्त होगा जब उसी चयन में चयनित कृषि शाखा के सभी कनिष्ठ अभियंताओं को पदोन्नति प्रदान कर दी जाएगी। इन कारणों से भी विचाराधीन वरिष्ठता सूची को हटाया जाना चाहिए।

(जोर दिया गया)

निष्कर्ष:

23. अतः, शिक्षक ग्रेड II के पद पर पदोन्नति हेतु याचिकाकर्ताओं पर विचार न करना संविधान के अनुच्छेद 14, 15, 16 और 21 के तहत उनके मौलिक अधिकारों का उल्लंघन है। सक्षम प्राधिकारी और राज्य ने केवल बालक विद्यालयों की अधिक संख्या के आधार पर वरिष्ठता सूची निर्धारित करके गंभीर कानूनी त्रुटि की है। ऐसे समय में जब 'बेटी' पढ़ाओ, बेटी 'बचाओ' का लक्ष्य होने के बावजूद, प्रतिवादियों की ऐसी कार्रवाई का न तो कानून में और न ही तथ्यों के आधार पर समर्थन किया जा सकता है।

24. उपरोक्त के मद्देनजर, वर्तमान रिट याचिका स्वीकार की जाती है। प्रतिवादियों को निर्देश दिया जाता है कि वे न केवल याचिकाकर्ताओं के मामले पर विचार करें, बल्कि शिक्षक ग्रेड III के पद पर नियुक्त सभी समान स्थिति वाली महिला शिक्षकों के मामले पर भी विचार करें। वर्ष 1998 तक के शिक्षकों को वर्ष 2008-09 और 2009-10 की रिक्तियों के लिए वरिष्ठ अध्यापक ग्रेड-II के पद पर पदोन्नति हेतु आवेदन करने तथा उन्हें सभी परिणामी लाभ प्रदान करने का अनुरोध किया गया है।

25. सभी लंबित आवेदन, यदि कोई हों, का भी निपटारा हो जाएगा।

26. यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि प्रतिवादियों द्वारा सम्पूर्ण प्रक्रिया इस आदेश की प्रमाणित प्रति प्राप्त होने की तिथि से तीन माह की अवधि के भीतर पूरी कर ली जाएगी।

27. कोई लागत नहीं।

(अनूप कुमार ढांड), जे

आशु /11825.

अस्वीकरण: इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी आधिकारिक एवं व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेज़ी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।



अधिवक्ता अविनाश चौधरी